डाउनलोड मुद्रण

अ+ अ-

कहानी

होंठों के नीले फूल

प्रियंवद

बूबा के होंठ बिलकुल लाल थे और बूबा को मौत बहुत अच्छी लगती थी। बूबा हमेशा बहुत धीरे - धीरे मरना चाहती थी। जाडे क़ी कुनमुनी धूप जैसे पूरे बदन पर रेंगती है, बिलकुल उसी तरह बूबा मौत को छूना चाहती थी।

" तुम मेरा गला दबा सकते हो?" बूबा मुस्कराकर पूछती।

" दबा सकता हूं।" मैं अपनी हथेली में बूबा की सफेद नर्म गर्दन दबा लेता। बूबा चुपचाप दीवार से सिर टेके आंखें बन्द किये बैठी रहती। मेरी उंगलियों का कसाव बढता जाता, लेकिन बूबा के चेहरे पर कोई सिकुडन नहीं आती। बूबा के गले की नसें उभरने लगतीं और बूबा के गले का वह हिस्सा नीला पड ज़ाता। मैं अपना हाथ हटा लेता और बूबा के गले का वह नीला हिस्सा चूम लेता।

" तुम मेरी मां हो बूबा।" मैं फुसफुसाया।

और फिर बूबा मेरा सिर अपने सीने में दुबका लेती। " डरपोक, " बूबा हंस देती और मेरी गर्दन पर उसके दांत धंस जाते।

बहुत पहले एक तपती दोपहर में एक पतंग के पीछे भागता हुआ मैं बूबा के घर में घुस आया और बूबा ने मुझे रोक लिया। मेरे हाथों में चप्पल, धूल से सना चेहरा, पसीने और मिट्टी में डूबा पूरा बदन।

" कौन हो तुम?" बूबा ने मेरा हाथ पकड लिया था।

" वो पतंग" मैं बिलकुल सन्न रह गया था तब बूबा को देख कर। कहानी किस्सों के पन्नों से फडफ़डाती जैसे कोई राजकुमारी निकल आयी है। गोरा मुंह, लाल होंठ और लम्बे बाल। हंसती तो फूल झरते हैं। रोती है तो मोती। आंखें उदासी से कढी हुई।

" इतने गन्दे - सन्दे घूमते हो, मां नहीं डांटती?"

" मां नहीं है।"

" इतने छोटे हो और मां नहीं है! " बूबा की आवाज भीग गई थी और बूबा ने मुझे अपने बिलकुल पास खींच लिया था।

" तुम रोज आओगे मेरे पास?"

" क्यों?"

" क्योंकि तुम्हारी आंखें बहुत अच्छी हैं, बिलकुल सैटेनिक ब्राऊन।"

" तुम बिलकुल राजकुमारी लगती हो।" मेरा डर खत्म हो गया था।

" ओ बाबा" बूबा खिलखिला कर हंस पडी थी।

" तुम क्या किसी का खून पीती हो?"

" ओ मां" बूबा हंसते - हंसते गिर पडी थी।

" मेरा नौकर कहता है, जो किसी का खून पीता है उसके होंठ बिलकुल लाल हो जाते हैं, तुम्हारी तरह।

बूबा फिर मेरा हाथ पकड क़र खींचती हुई अन्दर ले गई थी। मेरे हाथ - पैर धोकर उसने मुझे न जाने क्या - क्या खिलाया। सीने से लगाये न जाने कितनी देर दुलराती रही और मैं उस तपती दोपहर में अपने अकेले बचपन को हथेली में बन्द किये धीरे धीरे पिघल कर बूबा के अन्दर सिमट गया था।

उसके बाद मैं रोज आता रहा। शाम होती और मैं भागता हुआ बूबा के घर पहुंच जाता। बूबा तभी नौकरी से वापस आती हांफती हुई। बाबा की दवा के पैसे बचाने के लिये एक दो मील पैदल चल कर आती वह। बूबा अपना काम करती रहती और मैं कमरे की दहलीज पर चुपचाप बैठा बूबा को देखा करता। बूबा खाना बनाती, कपडे धोती, बिस्तर लगाती, बाबा को खिलाती, दवा देती और फिर सुलाती भी। न जाने कितनी देर हो जाती। कभी - कभी मैं ऊंघने लगता। चौंकता तब जब बूबा हिलाती।

" सो गया क्या?" बूबा वहीं बैठ जाती

" मैं जाग जाता।" इतनी देर कर देती हो, कल से नहीं आऊंगा।"

" नहीं बाबा।" बूबा मेरा चेहरा अपने हाथों में भरकर अपने लाल होंठ मेरे माथे पर रख देती, कल से देर नहीं करुंगी बस।" और फिर मेरा सिर खींचकर अपनी गोद में रख लेती। थोडी देर में बूबा की उंगलियां मेरे बालों में, गले में, सीने पर एक बेचैनी के साथ घूमने लगतीं। साथ ही साथ बूबा हमेशा, चुपचाप कोई किताब भी पढती रहती। अक्सर खलील जिब्रान की कविता - दि ब्यूटी ऑफ डेथ।

मेरे गाल पर जब कोई बूंद गिरती तब मैं चौंकता।

" तुम रो रही हो बूबा?" मैं उठ बैठता। बूबा अपने आंसू पौंछ लेती।

" ऐसा क्यों होता है। सुख आदमी को छूता हुआ क्यों निकल जाता है। उसे अपने में समेट कर जम क्यों नहीं जाता, बर्फ की सिल्ली की तरह।"

मैं कुछ नहीं समझ पाता। बूबा को टुकुर - टुकुर देखा करता। बूबा फिर मुझे अपने सीने में दुबकाकर बडबडाते हुए वहशियों की तरह चूमने लगती, " सुख केवल कोई क्षण होता है रे। मेरा वह क्षण तू है?" मेरा दम घुटने लगता और मैं फिर उसी तरह पूरे का पूरा पिघलने लग जाता।

" तुम मेरी मां हो बूबा।"

" हां मैं तेरी मां हूं! " बूबा फफक कर रो पडती। मैं वैसे ही बूबा के सीने पर सिर रखे लेटा रहता और मेरा चेहरा बूबा के आंसुओं से भीगता रहता।

और तब मैं सोचा करता अपने नौकर की बात। वह राजकुमारी जितना रोती थी उतने ही उसके बाल लम्बे होते जाते थे। बूबा के बाल इसलिये लम्बे हैं, क्योंकि बूबा हमेशा रोती है।

जमीन का वह टुकडा बिलकुल लाल हो जाता था। गुलमोहर सारी रात बरसते और उसकी पंखुरी - पंखुरी से जैसे वह टुकडा खून से बीग जाता, बिलकुल बूबा के होंठों की तरह।

जमीन के उसी सुर्ख टुकडे क़े ऊपर हम बडे होते रहे थे। मैं, बूबा, मेरे अन्दर का आदमी और बूबा के अन्दर की औरत।

" जानते हो, मुझे और तुमको किस चीज ने जोडा है?" बूबा पूछती।

" नहीं।"

" अपने होने के बेमानीपन ने।अपने अस्तित्व की निरर्थकता ने।" न जाने तब कितनी रात बीत चुकी होती। बूबा हमेशा तब ऐसी ही बातें करती।

" हम दोनों एक दूसरे के कन्धों पर सिर रखकर रोते हैं रे। एक दूसरे के अकेलेपन को चुपचाप कुतरते हुए। यही वह जमीन है, जिस पर हम दोनों मिलते हैं।"

मैं बूबा का हाथ अपने हाथों में ले लेता। बिलकुल सूखी झुर्रियों वाला हाथ। बूबा के पूरे बदन से उसका हाथ बिलकुल अलग था। जैसे किसी बूढी औरत की हथेली काटकर बूबा के हाथों में जोड दी गयी है।

" तुम्हारा हाथ ऐसा क्यों है?" मैं बूबा के हाथ की उभरी नीली नसों पर उंगली फेरता रहता।

" हाथ हमेशा दिल की तरह होता है।" बूबा हंस पडती, " तूने कभी ऋग्वेद का गीत सुना है? " बूबा मुझे अपने पास खींच लेती।

" कौन सा?"

" यम और यमी का गीत?"

" नहीं!"

" जानता है तू यम और यमी भाई - बहन थे। एक दिन यमी ने यम से पूछा, 'तू मेरा कौन है? भाई यम बोला। तेरा धर्म क्या है? यमी ने पूछा। तुझे सुख देना। यम बोला। मुझे रति सुख दे यमी ने याचना की।"

" बूबा।" मेरा हाथ कांप गया।

" डरपोक!" खिलखिला कर हंस पडी बूबा, " देहातीत होकर सोच एक बार यमी की इस बात को। फिर जीवन दर्शन बना ले _ अपने जीवन के सारे मूल्यों का आधार।"

" बूबा।"

" हां रे, यमी की इस बात से अचानक उसका जीवन कितना बडा हो गया है। कितना उनमुक्त, व्यापक और स्पष्ट! ऐसा नहीं है क्या? यह दृष्टान्त तो स्वयं में एक दर्शन है। यमी की दृष्टि कितनी निर्भीक और विस्तृत है। जीवन के छोटे - छोटे टुकडों में उत्तीर्ण। तुझको इसलिये बता रही हूं कि केवल तुझसे ही तो बोल पाती हूं। फिर तुझे तो अभी बहुत बडा होना है। सत्य का अन्वेषी, तटस्थ दृष्टि अबी से सीख ले"

" लेकिन पाप! "

" धत्। अगर पाप और पुण्य सत्य हैं तो सुख कुछ भी नहीं होता रे! और अगर सुख सत्य है तो पाप - पुण्य का कोई अस्तित्व नहीं है। सुख की नित्यता तो हम निश्चित ही जानते हैं, इसलिये पाप - पुण्य कुछ नहीं है।"

" तो यमी की स्थिति।"

" हां, यमी की स्थिति मान्य है। यमी के जीवन की स्पष्टता मेरा आदर्श है।"

" और रिश्तों का धर्म?"

" रिश्तों के नाम जीवन को बहुत छोटे छोटे घेरों में बांध देते हैं। आंखों में कपडा बांधे बैल की तरह आदमी उन्हीं घेरों में घूमता रहता है। यह गलत है। एक बार में आदमी क्या सब रिश्ते नहीं भोग सकता? क्या मेरे और तेरे रिश्ते का कोई नाम है? क्या मैं तेरी सब कुछ नहीं हूं? मां, दोस्त, बहन बोल?"

" हां, बूबा।" मैं बूबा की हथेली की नीली नसें चूम लेता। " तुम मेरी इकलौती आस्था हो, मेरी रक्षिता हो, मेरी कल्याणी।" मेरी आवाज क़ांपने लगती। बूबा मेरी निगाहों में तब न जाने कितनी ऊपर उठ जाती। ज्ञानी, गंभीर, ममत्वमयी बूबा।

" आ चलें।" बूबा उठ जाती।

गुलमोहर की सुर्ख पंखुरियां बूबा के बालो में उलझी होतीं।

" एक बात पूछूं बूबा?" मैं ठहर जाता। " फिर यम ने क्या किया?"

" उसका कोई महत्व नहीं है रे। देह का अस्तित्व तो कुछ क्षणों का होता है बस।"

" अच्छा बूबा, तुम जो कुछ कहती हो, क्या सचमुच उतना उनमुक्त होकर कर सकती हो?"

" शायद," बूबा हंस देती, " अपनी बूबा को समझा नहीं क्या?"

" समझा तो बिलकल नहीं। रोज नई बूबा को देखता हूं न!"

बूबा खिलखिला पडती, " यू सेटेनिक ब्राउन? " और फिर मेरी गर्दन में बूबा के दांत धंस जाते।

कभी कभी मैं सोचता कि बूबा इतनी चुप क्यों रहती है, क्यों ऐसी बातें करती है, तो मुझे समझ में नहीं आता। एक दिन बूबा ने मुझे बताया था, " मेरी पूरी देह मुर्दा ख्वाबों से गुंथी है रे, और जब कभी उन ख्वाबों में से कोई ख्वाब करवट लेता है तो मैं बिलकुल चुप हो जाती हूं। कहीं वह ख्वाब जाग न जाये"

बूबा रो पडी थी फिर, और तब मुझे बूबा के पूरे बदन पर मरे हुए सपने फैले दिखाई पडे थे। मुझे लगा था कि बूबा की देह का कोना कोना हर वक्त कोई न कोई लडाई लडता रहता है और उन्हीं मरे हुए सपनों के बीच, कोने - कोने की लडाई के बीच मेरी बूबा बडी होती रही है। उसके बाद मैं ने कभी कुछ नहीं पूछा। मैं जानता था। बूबा किसी जमीन का कोई ऐसा टुकडा चाहती है, जिस पर बूबा अपने पांव रख सके। थकी हुई हांफती बूबा अब और नहीं लडना चाहती और इसलिये जमीन वह टुकडा कभी यमी की स्थिति होती, कभी खलील जिब्रान की दि ब्यूटी ऑफ डेथ और कभी मैं।

बूबा उस रात सर्दी से कांप रही थी।

" अन्दर चलें? " मैं ने कहा।

" नहीं" बूबा ने अपना शॉल और कसकर लपेट लिया। बेहद थकी लग रही थी बूबा। न जाने उंगली से क्या - क्या खींचती रही फर्श पर। मैं चुपचाप बैठा देख रहा था। मैं जानता था यही वह क्षण है जब अपने अस्तित्व की निरर्थकता के बोझ से बूबा का दम घुटने लगता है और बूबा सिर्फ मरना चाहती है। बिलकुल धीरे - धीरे। मैं सोच रहा था कि बूबा मुझसे पूछेगी कि क्या मैं उसका गला दबा सकता हूं और मैं बूबा के गले पर अपना हाथ धर दूंगा।

" सुनो" बूबा बहुत देर बाद बोली। बूबा की आवाज बहुत धीमी थी, " मैं महसूस करना चाहती हूं कि मैं हूं।" बूबा सीधे मेरी आंखों में देख रही थी।

"बूबा!" मैं ने बूबा के चेहरे पर ऐसा तनाव और थकान कभी नहीं देखी थी। बूबा का चेहरा इस सर्दी में भी भीग रहा था। बूबा के साथ हमेशा से चलता हुआ मीलों लम्बा अकेलापन और सन्नाटा भरती हुई शाम की ललछौंही, कुछ ऐसा ही बूबा के चेहरे पर फैला था।

" मैं अपने होने को पूरा, पर जीना चाहती हूं।"

" मैं समझा नहीं बूबा।"

" तू मेरे लिये क्या कर सकता है?"

" कुछ भी।"

" कुछ भी? सत्य - असत्य से परे, सुख - दु:ख के बिना?"

" हां बूबा।"

" मुझे चूमो।" बूबा ने मेरा हाथ पकड लिया। बूबा की हथेली भीग रही थी। बूबा की आंखें धीरे धीरे बलने लगी थीं।

" बूबा।" मैं डर रहा था बूबा की सूरत से। उदासी से कढी बूबा की आंखें सिर्फ एक औरत की आंखें रह गई थीं।

एक ऐसी औरत जो हमेशा से बूबा के अन्दर थी, बूबा के साथ बडी होती रही, लेकिन बूबा ने उसे कभी अपने से बाहर झांकने नहीं दिया। वह औरत धीरे धीरे बूबा के जिस्म की एक एक नस में फैल गयी थी और आज वही औरत जब बाहर निकलना चाह रही थी तो बूबा की एक एक पर्त एक एक नस चटक रही थी।

मैं उठा और धीरे से मैंने बूबा का गला चूम लिया। बिलकुल वही हिस्सा जो मेरे दबाने से नीला पड ज़ाता था।

" मेरे होंठ।" बूबा फुसफुसायी। बूबा ने अपनी आंखें बन्द कर लीं। मैं ने झुककर बूबा के होंठ चूम लिये। सुर्ख लाल होंठ। एक घूंट भरा हो जैसे मैं ने खून का।

" और" बूबा की बेचैन उंगलियां मेरी गरदन मेरे सीने पर रेंग रही थीं।

" और"

" बूबा।" मैं हांफने लगा। मेरे चेहरे पर पसीना छलछला आया। मेरा बदन कांप रहा था। मुझे लग रहा था कि मैं अपने आप से छिटक कर अलग हो गया हूं और सिर्फ एक आदमी मेरे अन्दर शेष रह गया है।

बहुत पहले मैं ने पूछा था बूबा से कि यम ने क्या किया बूबा ने कहा था, उसका कोई महत्व नहीं है। महत्व है जीवनदृष्टि का, मूल्यों का और मैं ने फिर पूछा था बूबा से कि मूल्यों के लिये तुम जिस तरह से सोचती हो, उतना मुक्त होकर उनको जी सकती हो?

" शायद" बूबा ने कहा था। मेरी वही बूबा, मेरी इकलौती आस्था मेरे सामने बैठी थी। यमी की जीवन दृष्टि को आदर्श मानने वाली, शाश्वत सत्य की अन्वेषिका, पाप - पुण्य के अनास्तित्व और रिश्तों के धर्म की अध्येत्री, मेरी रक्षिता - मेरी कल्याणी, मेरी मां।

" मुझे सुख दे रे मुझे विस्तार दे।" बूबा ने खींच लिया।

"बूबा" मैं कुछ कहना चाहता था। लेकिन अचानक ही बूबा की आंखों में, होंठों पर, सैकडों मरे सपने करवट बदलने लगे। बूबा की हांफती सांसों को किसी ज़मीन का एक टुकडा चाहिये था, जिस पर रुककर बूबा कुछ गहरी सांसें ले सके। मैं सिर्फ बुदबुदा कर रह गया। और मैं, सिर्फ एक आदमी, बूबा के, सिर्फ एक औरत के सीने पर हांफता हुआ गिर पडा।

सुबह जब मैं गया तो बहुत सन्नाटा था। बाबा कमरे में सो रहे थे। कमरे की दहलीज पर धूप का एक टुकडा रेंग रहा था। बूबा कहीं नहीं दिखी। मैं वहीं एक कोने में बैठ गया। कुछ देर में बूबा बाथरूम से निकली। वही पुरानी उदासी से कढी आंखें। सूजी हुईं। सारी रात रोई थी शायद बूबा। होंठ भी कुछ छिले हुए और सूज रहे थे। मुझे देखते ही बूबा चौंक गयी। मेरी आंखें झुक गयीं।

" तू आ गया रे!" देख तो मेरे होंठ कैसे नीले हो गये हैं! बिलकुल जहर में डूबे। सारी रात तो धोया है मैं ने इन्हें, लेकिन यह रंग छूटता ही नहीं।" बडबडाती हुई बूबा फिर नल पर चली गयी।

मैं फूट - फूट कर रो पडा।

"ओ अनामा, अदृष्टा मंत्रकर्ता, तुम्हारी कथा अधूरी थी। आगे क्या हुआ, यह मैं बताता हूं। शाश्वत सत्य की अन्वेषिका यमी देह सत्य को अपने जीवन के स्तर पर जी नहीं पायी और उसके होंठ नीले पड ग़ये। मेरी बूबा की तरह जहर में डूबे दो नीले फूलों जैसे होंठ।"

शीर्ष पर जाएँ